Chapter-9

नवम् अध्याय

शैली वैविध्य

प्रतीकात्मक शैली,	बिम्बात्मक शैली,	आलंकारिक शैली
संदर्भ गर्भित शैली,	प्रश्नात्मक शैली,	कुंडलिवत् शैली,
समस्तपद शैली,	असमस्त पद शैली,	अनुवादात्मक शैली,
संगीत,	तुकान्त,	वर्णों का सुन्दर विनियोग

शैली वैविध्य

गुजरात के साखिकारों ने विविध शैलियों में साखियाँ लिखी हैं । इन शैलियों के प्रयोग द्वारा उनकी अभिव्यक्ति में प्रखरता और सहजता आ गई है । साखियों की जो पुरानी उपदेशात्मक विधा है उससे हटकर न केवल नवीनता है अपितु अपने गहन अध्ययन जैसे गीता, उपनिषद आदि ग्रन्थों का अध्ययन करके साखियों में उसके प्रयोग की नयर प्रणाली का निर्देश भी है । विशेषत: भागवत का उदाहरण उनकी साखियों में यत्र-तत्र बिखरा पड़ा है । इससे उनके बहुश्रुत होने का भी संकेत मिलता है । पौराणिक कथाओं के साथ-साथ गुरू तथा संतों की वन्दना भी साखिकारों ने अपनी साखियों में की है । इन साखिकारों द्वारा रची गई ऐसी फुटकल या साखी ग्रंथों में क्षेत्रवाद या धर्मवाद कहीं भी नहीं दिखाई देता है । ब्रह्म विषयक विभिन्न प्रश्न तथा अपने अनुभूति के द्वारा ही उनका समाधान आदि को भी संतोंने किया है । विषयानुकूल इनकी शैलियाँ भी बदलती रही । इनकी रचना शैली का अध्ययन की सुविधा के लिए हमने उनको निम्नलिखित विभिन्न भागों में विभाजित किया है :-

i) प्रतीकात्मक शैली
ii) बिम्बात्मक शैली
iii) आलंकारिक शैली
iv) संदर्भगर्भित शैली
v) प्रश्नात्मक शैली
vi) कुंडलिवत् शैली (सपर्गतिवत् शैली)
vii) समस्त पद शैली
viii) असमस्त पद शैली
ix) अनुवादात्मक शैली

i) **साखियों में प्रतीकात्मक शैली :**

गुजरात के संतों ने आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए प्रतिकों का प्रयोग किया है । गुजराती संतों ने लोक जीवन में उन रूपों-चित्रों, वस्तुओं एवं सम्बन्धों का चयन किया है जिनमें उनकी अनुभूति का साम्य हो और जो सामान्यत: लोक परिचित एवं सामान्य जनता के नित्य प्रतिदिन व्यवहार से भी सम्बन्धित हो ।

भक्त के हृदय में आध्यात्म विषयक जो आनन्दोल्लास होता है उसे वह लोक कल्याण की भावना से प्रेरित होकर जन-जन तक पहुँचाना चाहता है । साधारण लोकों को सरलता से गुढ़ तत्वों को समझाने के लिए साधारण शब्द-प्रतिकों का प्रयोग भक्तों के लिए अनिवार्य हो गया । अत: साखिकारों ने जीवात्मा, माया, शरीर और मन को लेकर विभिन्न प्रतीक योजना बनाई है । अब हम साखियों में इनके प्रयोग पर चर्चा करेंगे -

ईश्वर ही इस सम्पूर्ण जगत का सृष्टा, पालक और संहारक है । सर्वे सर्वा वही है इसलिए उसे धणी, प्रिय, खसम, कीरतार, सरजणहार आदि नामों से पुकारा है । अब हम साखियों में प्रयुक्त प्रतीकात्मक शब्दों के निदर्शन द्वारा यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि गुजरात के साखिकारों का भावजगत कितना व्यापक है और अभिव्यक्ति कितनी चोटदार है, उनकी अनुभूति कितनी गहरी है और उनकी पैनी दृष्टि कितनी दूर तक जाती है । कहीं-कहीं साखिकारों ने एक ही प्रतीक को माया में और जीव में प्रयोग किया है । यह गुजराती साखिकारों की विशेषता है कि उन्होंने शब्द चयन की अपेक्षा भावाभिव्यक्ति की और अधिक ध्यान दिया ।

१।१"सर्जनहार"

वस्ता ने अपनी साखियों में परम पुरुष, हरि-गोपाल, राम, साहब कहकर ईश्वर को ईश्वर सम्बोधन किया है । सृष्टिकर्ता परम पुरुष जो इस सृष्टि का बीज है उसी का ध्यान करने से परमतत्व की प्राप्ति होती है अन्यथा सब तान टूट जाते हैं ।

सब सृष्टि को बीज है, "परम पुरूष" का ध्यान, 10

- अंग बंदगी को

कीया कराया कुछ नहीं सहजे रीझे कीरतार,
मन का मता तूट गया शिरपर "सरजन हार"[1] 17

- अंग बंदगी को

(2) "बाजीगर"

वस्ता ने ईश्वर को "बाजीगर" कहा है। ईश्वर बाजी रूप संसार को फैलाने वाला है। वही इस जगत का सृजनहार है उसके इस लीला काण्ड के कारण इस जगत की उत्पत्ति होती है वह प्रसारक है, विस्तारक है -

बाजीगर बाजी रची ऐसा जैसा सीमल फूल
देखीता सोहयामणा उपजत नाहीं मूल।[2]

ज्ञानीजी ने भी ईश्वर को"बाजीगर" कहा है -

"बाजीगर बाजी रची ।। बहुवीध मांडया खेल" ।

- बाजीगर को अंग

बाजीगर देखा नहीं ।। बाजी भूला लोक ।।[3] 3

- बाजीगर को अंग

(3) "साहब"

नाथाजी ने प्रभु को "साहब" कहकर पुकारा हैं -

----

(1) वस्ता नी साखियाँ - ह0लि0

(2) वस्ता नी साखियाँ - ह0लि0

(3) ज्ञानीजी नी साखियाँ - ह0लि0

"बहुरी नाम "साहिब" के, एक नाम आधार,[1]

गुलाबदास ने भी साहब कहकर ईश्वर को सम्बोधित किया है -

साहिब तुम्हारे चरण में गुलाब को विश्वास[2] 5

वस्ता ने ईश्वर को "साहब" कह कर सम्बोधित किया है और उसकी सर्वव्यापकता को स्पष्ट किया है । अन्यत्र कवि ने ईश्वर को धणी, राम, पियु, माता, पिता और कुल्लु कुटुम्ब भाई कहकर अपनत्व का प्रदर्शन किया है । इससे कवि ने ईश्वर के करुणामय रूप को स्पष्ट किया है ।

माता-पिता रूप परमात्मा से पुत्र रूप जीवात्मा अलग होकर विरह में एकाकी जीवन व्यतीत कर रहा है -

तुमही माता, तुम ही पिता, तुम कुल्लु कुटुम्ब भाई[3] 7
- अंग विनती को

वस्ता ने ईश्वर में कोई लिंग भेद नहीं माना है । अखा की तरह "अ लिंगी" भाव से ईश्वर की आराधना करते हुए कहते हैं कि पिय रूप परमात्मा तथा धणी रूप आत्मा को एकात्म न होने देने वाली परिस्थिति के कारण जीव विरहावस्था में है -

दर्द दीवानी हो फरूँ मेरे पियु वियोग । 8
- अंग विरहीजन को

माल "धणी" के हाथ में मेल्या सबही ठौर ।[4] 24
- अंग बंदगी को

---

(1) संत नथाजी काका - (पृ0 295)

(2) माणेकलाल राणा से उपलब्ध ह0लि0 से

(3) वस्ता नी साखियो - ह0लि0

(4) वस्ता नी साखियो - ह0लि0

(4) "किरतार"

राजे ने अपनी साखियों में ईश्वर को "किरतार" कहा है वही इस जगत का निर्माता है -

अजब कला किरतार की कल सके नहीं कोय[1] 16

(5) "राम, हरि, कुटुम्ब, कुल, नात"

कवि ने ईश्वर को सत्ता की ही ध्वनि में राम, हरि, कुटुम्ब, कुल, नात कहकर रक्षक या रक्षणहार के रूप में तथा प्रियत्व का भाव बोध कराने वाले के रूप में प्रस्तुत किया है -

हरि मात हरि तात है हरि कुटब कुल नात[2] 21

रात दिन राजे कैहे रटू ताहारा नाम
दूजा मिले न आसरा दूजा करू न काम[3] 32

(6) "धणी"

प्रिय रूप परमात्मा ही राजे का धणी है उससे मिलने के बाद राजे ठाठ से रहने की कल्पना करते हैं क्योंकि वह तो विश्व का मालिक है। भक्त को किस की कमी हो सकती है। एक सामाजिक सम्बन्ध को कवि ने प्रतीक विधान के द्वारा प्रस्तुत किया है। ठाठ से रहने की कल्पना से एक रागात्मक भाव उत्पन्न होता है जो मधुरता तथा आन्तरिक प्रेम, जिसमें अधिकार तथा थोड़ा अहंकार है, कि उसके जैसा कोई नहीं है का भाव है, यहीं कवि की कला का परिचय मिलता है।

धणी मिला धरणी धरा काहे न कीजे ठाठ[4] 35

---

(1) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 216)
(2) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 217)
(3) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 218)
(4) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 218)

(7) "लाल"

जीवणदास (राम-कबीर) ने अपनी साखियों में कबीर की भाँति परब्रह्म के लिए "लाल" शब्द का प्रयोग किया है । "लाली मेरे लाल की" तरह जीवण ने "नूरी मेरे लाल की" कहकर सुन्दर प्रतीकात्मकता स्थापित की है । तेजस्वी ईश्वर का दर्शन करने पर भक्त को सर्वत्र ईश्वरीय प्रकाश का दर्शन होता है । भक्ति में रमने के बाद भक्त को किसी की इच्छा नहीं रहती । विश्व ब्रह्ममय लगता है -

"नूरी मेरे लाल की । जीत देखुं तीत लाल ।।[1] ।42

(8) "मेहबूब"

निर्माण साहब ने मेहबूब कहकर ईश्वरभक्ति स्पष्ट की है -

लगे ईश्क मेहबूब से, चहे दिदार दरवेश[2] 32

"घायल को घायल मिले, दिल से मिले दिलजान" कहकर निर्माण साहब ने एक सुन्दर प्रतीक प्रस्तुत किया है । इसी प्रकार कवि ने "बेहद" शब्द का भी प्रयोग किया है ।

(9) "बेहद"

"हद" का गुरू निर्वाण है "बेहद" बुझे न कोई
बेहद जो ही बखानते, गुरू हमारे सोई[3] 38

"बेहद" कहकर विशालता को दर्शाया है, ईश्वर के रूप में शक्ति और गुण की अपारता को स्पष्ट किया है । शायद ही इससे भिन्न कोई अन्य शब्द इस भाव को व्यक्त कर सकता, इससे कवि की प्रतीक चयनता में दक्षता का आभास होता है । नया प्रयोग भी कहा जा सकता है जो कि सूफी संत कवियों के प्रभाव से सम्भव है ।

----

(1) उदाधर्म पंचरत्न माला - (पृ0 179)
(2) संत निर्वाण साहब - (पृ0 264)
(3) संत निर्वाण साहब - (पृ0 264)

॥0॥ "हंस-बगुला"

वस्ता ने जीव को हंस कहा है । जिस प्रकार हंस मानसरोवर में रहता है उसी प्रकार जीव रूपी हंस संसार रूपी भवसागर में बगुलों ॥दुष्ट व्यक्ति का प्रतीक॥ के साथ रहता है -

हंस मान सरोवर में रहे, खीलर रहेत है बग[1]
- अंग चेतावनी को

दुष्ट व्यक्ति और सत व्यक्ति का भेद को दर्शाते हुए वस्ता ने सत कर्म के लिए "मोती" प्रतीक का उपयोग किया है और मच्छी को दुष्कर्म का प्रतीक माना है । ऐसे जीवन्त प्रतीक स्थापित करके कवि ने काव्यात्मक शक्ति का परिचय दिया है -

हंस तो मोती चुगे, बगुला मच्छी खाय[2]
- अंग चेतावनी को

करूणासागर ने हंस शब्द का प्रयोग जीव के प्रतीक के रूप में किया है -

हम हंसा उस धाम के, बसे जहां केवल[3] ।

दयाराम ने हंस के "नीर क्षीर विवेक" को प्रतीक रूप प्रस्तुत किये हैं । जिस प्रकार हंस नीर से क्षीर को अलग करता है उसी प्रकार सज्जन व्यक्ति असत् कर्म का त्याग कर सत् कर्म को ग्रहण करता है ।

॥।॥

॥1॥ वस्ता नी साखियों - ह0लि0 ॥2॥ वस्ता नी सा0 - ह0लि0

॥3॥ गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी - ॥पृ0 289॥

11। "नीर-क्षीर"

हिन्दी साहित्य में हंस का नीर क्षीर विवेक एक महत्वपूर्ण विषय है। इसको लेकर विद्वानों में अनेक चर्चायें होती रही है। इसका प्रयोग प्रायः प्रत्येक संत ने अपनी वाणी में किया है। सत् और असत् कर्म को स्पष्ट करने के लिए और सज्जन व्यक्ति की तिक्ष्ण विवेकशक्ति का परिचय कराने में इसके जैसा प्रतीक दुर्लभ है। दयाराम ने इस प्रतीक का प्रयोग इतनी कुशलता से किया है कि साखी अर्थ गूढ़ हो गया है।

नीर क्षीर मिश्रण जहाँ, प्रथम करत है हंस
ऐसे विज्ञानी सदा, निष्कलंक जीन वंस[1]   66

12। "बीज-नीर"

जीव और ब्रह्म का सम्बन्ध नित्य है। ब्रह्म जगत का एक मात्र कारण है और जीव को करण माना गया है। इसी भाव को छोटय ने बीज और नीर के प्रतीक द्वारा स्पष्ट किया है। बीज की सृष्टि करने के बाद नीर बरसाकर उसे सिंचने वाला ब्रह्म है -

बीज सकल प्रभु ने रच्यो, पूनी बरसावत नीर[2] ।।

अतः ब्रह्म ही जीव के सृष्टि का निमित्तकारण है।

13। "मीन-जल"

अर्जुन ने जीव और आत्मा की एकता प्रतिपादित करने के लिए "मीन और जल" के प्रतीक को अपनाया है। जिस प्रकार जल के बिना मीन का जीवित रहना असम्भव है और अन्न के बिना मानव का उसी प्रकार जीव भी आत्मा से बिछड़ कर अधिक दिन नहीं रह सकता। विरह अवस्था दोनों के लिए मीन और मानव असम्भव है। इसी भाव को स्पष्ट किया है -

"पानी बिन मीन का मरे, अन्न बिन मरे अरजून"[3] 88

11। रसथाल - ।पृ0 237। 12। छोटय नी वाणी - ।पृ0 250
13। अर्जुन वाणी - ।पृ0 485।

गुजरात के साखिकारों ने माया का वर्णन विषद रूप में किया है । सृष्टि का मूल कारण माया है इसके प्रपंच में पड़ने के कारण जीव को अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं । यही माया अनेक जाल बिछाकर जीव को ब्रह्म प्राप्ति से दूर रखती है । अतः संतों ने इसे सर्प नागिन आदि अनेक रूपों में कहीं तो प्रतीकात्मक शैली में और कहीं रूपक योजना द्वारा वर्णन किया है । साखियों में माया के कतिपय प्रतीक इस प्रकार उपलब्ध है ।

।।4। "डाकिणी-सापणी"

वस्ता ने माया को "डाकिणी" सापणी, जोगणी, बहु लोभणी, महु कहकर एक सुन्दर प्रतीक स्थापित किया है ।

जोगी के घर भयी जोगनी, संसारी के घर बहु
धनवंत के घर भयी लोभणी, कलाल के घर महु ।।

माया जगमा सापणी, निश्चे जाणे खाय
मोह लहेर आवे घणी, बड़ा बड़ा पड़ जाय ।। ।4

माया डाकिणी ज्यां मले त्यां लेवे उतार
ए वो चारे खाण में धरावे अवतार[1] ।। ।5

उपरोक्त साखियों में कवि ने विभिन्न प्रतीकों के द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि किस प्रकार माया के विशद चित्तवृत्तियाँ निरंतर अपनी ओर आकृष्ट करती हैं । इसे कवि ने जोगणी, बहु और महु के प्रतीकों के द्वारा स्पष्ट किया है । सामान्य, समाज में नित्य प्रचलित प्रतिकों का प्रयोग किया है । जिसे समाज के प्रत्येक वर्ग के सरलता से आत्मसात कर सकते हैं । माया अपनी कला कौशल को ~~विभिन्न~~ स्थान विशेषानुरूप प्रस्तुत करती है ।

।1। वस्ता नी साखियों - ह0लि0

डाकिणी, सापणी कहकर कवि ने माया के अविधात्मक रूप की चर्चा की है। उनका विश्वास है कि ब्रह्मोपासना में माया सबसे बड़ी बाधा है।

॥5॥ "घाणी का तेल"

माया के खेल को स्पष्ट करते हुए वस्ता कहते हैं -

नेम बंधी फेरवीज्युं तैली का तेल, उपरथी गौदा दे घणा उनका ऐसा खेल[1]

जिस प्रकार तेली तेल निकालने के लिए तिल को मुंगफली को पिसता है उसी प्रकार माया संसारी प्रपंचों में जीव को पिसती रहती है। भावात्मक रूप प्रस्तुत किया है।

॥6॥ "सर्प"

छोटय ने माया को सर्प कहा है और वह सर्प मनुष्य को पूर्णत: ग्रास कर लेती है क्योंकि जितनी मानव की लोभवृत्ति में तीव्रता आयेगी, सर्प की जकड़न उतनी मजबूत होती जायेगी। माया का बन्धन इतना प्रबल एवं मोहक है कि इसके विकारी परिणामों को जानता हुआ भी मन बार-बार इसी में फंसता रहता है -

जैसी जैसी जेवरी, लम्बी टेढ़ी होय[2]
तैसी तैसी सर्प की, लहे आकृति सोय ॥

॥7॥ "ऊँघ"

राजे ने ऊँघ को माया का प्रतीक रूप स्वीकार किया है।
"ऊँघे लागु आग" कहकर माया के प्रपंच के प्रति विरक्त भाव को व्यक्त किया है। यही ऊँघ जीव को ब्रह्म से दूर रखती है। अत: जाग्रत अवस्था में आये बिना इस ऊँघ से निजात पाना असम्भव है। इस प्रकार राजे माया का एक सुन्दर प्रतीक प्रस्तुत किया है -

---

॥1॥ वस्ता नी साखियों - ह0लि0

॥2॥ छोटय वाणी - ॥पृ0 256॥

आग लगु इस ऊँध कू ऊँध किये अचेत[1]
बीन जागे राजे केहे, हरि से लगे न हेत   70

॥8॥ "तरूवर के पत्ते"

भारतीय संस्कृति के अनुसार इस जगत का निर्माण कर्ता ब्रह्म है माया का लीला क्षेत्र है यह। साखिकारों ने दृश्यमान जगत की व्याख्या करते हुए प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग इस प्रकार किया है -

संसार की विसंवादिता के विभिन्न रंगों को प्रस्तुत करते हुए राजे कहते हैं -

जु तरूवर के पांतड़े ऐक आवत ऐक जात[2]
राजे ऐसे जगत को कोउ मरम न पात   103

जीव और जगत के मार्मिक सम्बन्ध को प्रस्तुत करके राजे दोनों की अनित्यता को दर्शाते हैं। कवि ने तरूवर को जगत का प्रतीक माना हैं और जीव को उसके पत्ते कहा है। तरूवर, जगत की तरह स्थित है और पत्ते जीव के प्रतीक होने के कारण इसकी अनित्यता को स्पष्ट करते हैं। इस प्रकार कवि ने प्राकृतिक सम्पदाओं को प्रतीक के रूप में अपनी साखियों में प्रस्तुत किया है।

॥9॥ "सागर बुद बुद"

प्रीतम ने भी जगत के लिए विभिन्न प्रतिकों का प्रयोग किया है। वस्तुतः यह विस्तृत संसार उस परम सूक्ष्म का ही स्थूल रूप है। कुछ काल पश्चात् क्रमशः यह स्थूल जगत अपने कारण-भूत सूक्ष्म ब्रह्म में ही विलिन हो जाता है। यही प्रक्रिया अनादि काल से चली आ रही है। प्रीतम ने इसी भाव को निम्नलिखित साखी में स्पष्ट किया है -

सागर में ज्युं बुदबुदा, ऐसे उपजे सृष्ट[3]   5

॥1॥ राजे कृत काव्य संग्रह - ॥पृ० 221॥
॥2॥ राजे कृत काव्य संग्रह - ॥पृ० 280॥
॥3॥ प्रीतम वाणी - ॥पृ० 91॥

सागर में बुदबुदे की तरह सृष्टि है और उसी में विलिन हो जाती है । कवि ने सागर और बुदबुदे को ब्रह्म और जगत के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है ।

॥20॥ "बाजी"

बाजी माहा बहु उपजे, बहु रहे बहु जाय[1] 8

- सहज सिद्ध अंग

॥21॥ "रत्न"

गुजरात के साखिकारों ने गुरू को अधिक महत्व दिया है । साखियों में "गुरू" शब्द का प्रयोग अति व्यापक रूप में किया है । साखियों में गुरू शब्द का प्रयोग अति व्यापक रूप में किया है । जीवन में गुरू के महत्व को विभिन्न प्रतिकों के द्वारा स्पष्ट किया है ।

अर्जुन गुरू को रत्न कहते हैं -

मन मुलक में गया, अमुलख तीन रतन्न
सत, नाम ने सतगुरू, अरजुन करो जतन्न[2] 55

एक रत्न जिस प्रकार पारखी के लिए अनमोल होता है उसी प्रकार भक्त के लिए गुरू भी अनमोल होता है । अतः यत्न सहकार गुरू की सेवा करनी चाहिये ।

॥22॥ "जल-लकड़ी"

मुरख लकड़ी जल मली, जल में जाय तलाय
ज्ञानी नाव गलावी ए, सीधा बन्दर स्हाय 53

लकड़ी को, मानव का प्रतीक माना है अर्जुन ने उसकी उपयोगिता को स्पष्ट किया है । लकड़ी पानी में रहते रहते गल जाती है परन्तु वही लकड़ी

॥1॥ अप्रकाशित साखियाँ फार्वस से उपलब्ध - ॥पृ0 33॥

॥2॥ अर्जुन वाणी - ॥पृ0 458॥

से अगर नाव तैयार की जाय तो वह बन्दरगाह ‹लक्ष्यस्थल› तक ले जाती है । अर्थात् कवि ने ज्ञानी को गुरू का प्रतीक माना है जिसके जतन से एक साधारण लकड़ी तारणहार का काम करती है । कवि ने "ज्ञानी" कहकर यहाँ एक सृजनात्मक व्यक्ति की प्रवृत्ति को स्पष्ट किया है । अत: यहाँ "ज्ञानी" शब्द का एक विशेष रूप में प्रयोग किया गया है । जो शिष्य को तो उबारता ही है तथा अन्य अज्ञानी भक्तों को ईश्वर प्राप्ति का भेद बताता है । अर्जुन ने लकड़ी और ज्ञानी के द्वारा एक सुन्दर प्रतीक स्थापित किया है ।

‹23› "अवधू"

गुलाबदास ने गुरू को अवधू कहकर संबोधित किया है । साखियों में अवधू सिद्ध आचार्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है । अवधू द्वारा ज्ञान प्राप्त कर ईश्वर प्राप्ति का पथ प्रशस्त हो जाता है सब ~~भ्र~~ भ्रम का नाश होता है तथा यह नश्वर संसार की अनित्यता भी स्पष्ट होती है ।

तादिन पड़दा टूट गया, दिखो अवधू वेश ।।[1]

निर्वाण साहब ने गुरू को "अवधू" कहकर भक्ति की पराकाष्ठा प्रतिपादित की है । जिसे अवधू जैसे गुरू की ज्ञान प्राप्ति हो गई केवल वही भक्त ईश्वर का जल्वा देख सकता है -

जिसने अवधू देखिया, सो ही जल्वा पाय[2]

‹24› "खीलर-गंगा"

वस्ता ने खीलर और गंगा के प्रतीक द्वारा अज्ञानी और गुरू के संबंध को स्पष्ट किया है जिस प्रकार एक खीलर के गंगा में मिलने पर वह अपना स्वतंत्र परिचय भूलकर गंगा कहलाता है उसी प्रकार एक अज्ञानी

‹1› माणेकलाल राणा से प्राप्त ह0लि0 से उद्धृत

‹2› संत निर्वाण साहब - ‹पृ0 264›

व्यक्ति को जब गुरू की संगति प्राप्त होती है तब वह ज्ञानी कहलाता है ।

खीलर गंगा में मलयो खीलर नाम ते वितरे[1] 2।
- अंग गुरू वंदन को

।25। "वस्त्र"

"वस्त्र मैलो हो गयो धोता निकले पोत"

वस्ता ने अव्यक्त रूप से गुरू को महत्व दिया है इस साखी में गुरू की प्रधानता ~~क~~ दी गई है । परन्तु कवि अपनी काव्य कौशल का परिचय देते हुए उसे अव्यक्त प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है जिस प्रकार मैला वस्त्र धोने पर स्वच्छ होता है उसी प्रकार अज्ञानी व्यक्ति को गुरू प्राप्ति होने पर उसकी अज्ञानता का नाश होता है अर्थात् उसे ज्ञान प्राप्ति होती है ।

।26। "खांडा-मसकल"

एक और सुन्दर साखी, जिसमें गुरू को "मसकल" कहा गया है और खांड भक्त को । जब "खांड" "मसकल" में चढ़ता है तो उसकी धार निकलती है । छिलका निकलकर अलग हो जाता है और सार तत्व एकत्रित होता है उसी प्रकार ज्ञानी गुरू के मिलने पर वह भक्त को अपने ज्ञान रूपी मसकल में कसता है जिससे उसका अज्ञान दूर होता है और ज्ञान का उदय होता है और अज्ञान के विनाश होने पर ब्रह्म की प्राप्ति होती है ।

खांडु मसकले जब चढ़े नीकले ताकी धार[2]
आहंकृत काट अलगा थयो युं दरशे किरतार 17
- अंग गुरू वन्दन को

उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि गुजरात के साखिकारों ने विभिन्न प्रतिकों के माध्यम से सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूतियों को और महत्वपूर्ण विषयों

।1। वस्ता नी साखियाँ - ह0लि0

।2। वस्ता नी साखियाँ - ह0लि0

को सहज बनाया है । जहाँ उन्होंने ईश्वर जैसे विराट विश्वव्यापी को सहज रूप से खसम, अवधू आदि कहकर सरलता से उसकी महत्ता स्थापित की है । उसी प्रकार जीव, जगत, माया, गुरू आदि गुढ़ विषयों के लिए उपयुक्त प्रतिकों के माध्यम से जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है । यह कहना असमीचित न होगा कि प्रतिकों के कारण साखियों के द्वारा साधारणीकरण की स्थिति स्थापित होती है जो जनता और साधकों के बीच योग सूत्र का कार्य करती है ।

इन साखिकारों ने न केवल उपरोक्त विषयों पर ही प्रतीक योजना का प्रयोग किया है अपितु मन, शरीर, आत्मा, खल, सुरती-निरती, सहज योग आदि विषयों पर भी ध्यान दिया है । विषय व्याप्ति के कारण इन सम्पूर्ण विषयों की चर्चा करना सम्भव नहीं है । परन्तु कुछ विशेष प्रतिकों का उल्लेख कर रही हूँ जो कि गुजरात के साखिकारों की हिन्दी भाषा को देन है । इन सामान्य प्रतिकों का विषय गुढ़ है अर्थात् व्यंगार्थ गूढ़ है परन्तु पढ़ने से साखी सरल और सरस प्रतीत होती है ।

दयाराम ने भक्ति विषयक सुन्दर भावों को प्रतिकों के माध्यम से व्यक्त किया है ।

{27} "सीप-स्वाति"

सीप सागर में रहे, स्वाति बुंद ईक लेई
सागर जल पीवे नहीं, टेक ही स्वाति सेई 48

सच्चा भक्त इस संसार के माया जाल के बीच रहकर भी केवल अपने ईश का भजन-मनन करता है । संसारिक प्रपंचों से उसका कोई संबंध नहीं होता ।

{28} "जल-कुमुद"

जल में बसे कमोदिनी, चंदा बसे आकाश
जो जाहिके मन बसे, सो ताहिको पास 231

उपरोक्त दोनों उदाहरण रसधान संकलित "साखी" दूहा" नामक ग्रंथ से उद्धृत है ।

अर्जुन ने प्रतिकों के माध्यम से जनता के समक्ष आत्मानुभूति को व्यक्त किया है ।

‡29‡ "सागर में गोता लगाना"

दिया दधि में डूबकी, मोती मिला अमूल
मन मेरा जाने सही, क्यूं कर भारवुं खूल ‡5

‡30‡ "गाय-घास-घृत"

गाय खाय छे घास कु, घृत निपावे जाय
अरजुन तो जुगते जमे, गाय तो लुखा खाय । 18

संसार में प्रपंचों में फंसकर मानव ईश्वर को भूल जाता है । माया के जाल में वह इस प्रकार फंस जाता है कि उसका अन्तिम समय आने पर भी वह नहीं चेतता । अर्जुन ने इसी भावों को नित्य प्रतिकों के माध्यम से प्रस्तुत किया है ।

‡31‡ "पिंजड़ा और तोता"

अरजुन पोपट पंखीआ, पढ़िआ चारे वेद
पढ़िआ पण ते क्या करे ? पड़िआ पींजर कैद ।। 27

मनुष्य अपने ज्ञान का अगर उपयुक्त प्रयोग न करे तो वह ज्ञान उसके लिए व्यर्थ है । ज्ञानी को चाहिए अपने ज्ञान द्वारा अज्ञानी लोगों को सतपथ पर चलने के लिए प्रेरित करे ।

पोपट मानव, पढ़िआ चारे वेद ज्ञान, पींजर कैद = अज्ञान के प्रतीक है।

ब्रह्म की प्राप्ति अथवा मिलन में राजे इतने मग्न है कि उनको "ब्रज के रजकण" भी श्रेष्ठ लगते हैं । कवि खुद को "रजकणों" से भी तुच्छ कहते हैं क्योंकि उन रजकणों को ब्रज की गोपियों का स्पर्श प्राप्त हुआ है जिससे राजे अभी तक वंचित हैं । ब्रह्म मिलन की आतुरता में कवि जड़ और चेतन के भेद को भी बिसरा देते हैं ।

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि गुजरात के साखिकारों ने प्रतीकात्मक प्रयोग में अपने अनुभवों को स्पष्ट करने में पूर्णत: सफल रहे । उनका प्रयोग आत्मा परमात्मा विषयक तत्वों को जनता के मध्य सरलीकरण करने में सहायक हुई ।

II) बिम्बात्मक शैली

साहित्य में बिम्ब विधान की अती पुरानी परम्परा है । मनुष्य के जीवन में बिम्ब विधान का बड़ा महत्व है । प्रस्तुत परिवेश के संवेदनों और प्रत्यक्ष के अतिरिक्त उसके मानस में अतीत की तथा कभी अस्तित्व न रखने, न घटनेवाली वस्तुओं और घटनाओं की असंख्य प्रतिमाएँ भी रहती हैं । बिम्ब शब्द इसी प्रतिमा मानव प्रतिमा का पर्याय है । बिम्ब दो प्रकार की मानी जाती है । स्मृतिजन्य और स्वरचित ।

स्मृतिजन्य बिम्ब पूर्वगामी अनुभूति का पुनरुत्पादक मात्र होता है । स्वरचित बिम्ब नूतन और मौलिक होती है । यह नूतन बिम्ब विधान समस्त काव्य, कला, संगीत और नवनिर्माण का आधार है । भाषा और चिन्तन के मूल उपादान बिम्ब ही है ।[1]

संत साहित्य में बिम्बात्मक शैली अति महत्वपूर्ण शैली है । अप्रस्तुत की कल्पना करना ही संत भक्तों का महत्वपूर्ण ध्येय है । अत: सामान्य जनता में इसी भाव के प्रचार और सरलीकरण हेतु संतों ने ब्रह्म विषयक विचार, उपदेशात्मक वाणियों और निषेधात्मक कार्यों को विभिन्न बिम्बों के माध्यम से सरल, सुन्दर और सहज रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है ।

गुजरात के साखिकारों ने भी विभिन्न प्रकार की बिम्ब रचना करके जनता के मध्य अपनी उक्ति को स्पष्ट किया है । साधारण से साधारण बिम्बों का प्रयोग किया है क्योंकि साधारण बिम्ब का अर्थ है सहजग्राह्य । अत: उन्होंने बिम्बों का

---

(1) हिन्दी साहित्य कोश - भाग-2 - (पृ0 431)

चयन अपने परिवेश से किया है । प्रीतम जैसे महात्मा ने विष, काग, गधा, मरकट, कटंक लोह आदि का बिम्ब प्रस्तुत किया है । कुछ बिम्बों के उदाहरण प्रस्तुत हैं -

विख घोली ने पीजिए, पड़ीए पावक मांही,
कहे प्रीतम "साकुट" तणो, संग करे सुख नाहीं ।[1] 4

प्रीतम कहते साकुट का संग विष पीने के समान है । जिस प्रकार विष तज्य है उसी प्रकार साकुट भी तज्य है ।

मन करकट मानव तणों, काम फकीर ते साथ
प्रीतम नाच नचावही, लोभ लाठी लिए हाथ ।[2] 29

कवि ने मन को मरकट और काम को फकीर कहा है जो लोभ रूपी लाठी लेकर मानव को नचाता है । एक सुन्दर बिम्ब है । साधारण से साधारण व्यक्ति भी इस बिम्ब के द्वारा कवि की उक्ति को आत्मसात कर सकता है ।

कामी कंटक लोह है, सहेज सचेत न होय,
कहे प्रीतम मन समज के, संग करो मत कोय । 32

"कामी काग समान है, कामी गर्धव सरीखा"

कामी नर सुकृत करे, जेसो कुंजर श्वान
कहे प्रीतम लई शीश पर डारे धूल निदान । 8

उपरोक्त उदाहरण से प्रीतम के साधारण से साधारण शब्दों का प्रयोग, सहज रूप से निषेधात्मक उक्ति को स्पष्ट करने की कला, जो कि प्रकृति और दिनचर्या के उपकरणों और माध्यमों से युक्त होने के कारण सहज ग्राह्य हो गई है ।

---

(1) प्रीतम वाणी - (पृ0 52)
(2) प्रीतम वाणी - (पृ0 96)

iii) आलंकारिक शैली

काव्य की शोभा में अभिवृद्धि करने वाले तत्वों को अलंकार कहा गया है। ये अलंकार जहाँ एक ओर काव्य की अभिव्यक्ति को सुन्दरता प्रदान करते हैं दूसरी ओर कवि की कल्पना शक्ति के परिचायक भी होते हैं। अलंकार प्रयोग की सफलता असफलता इस बात पर आश्रित है कि इनके प्रयोग द्वारा भावों का अधिकाधिक तीव्र होकर हृदयंगम होना।

गुजरात के साखिकारों ने अपनी साखियों में अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए अलंकारों का व्यवहार नितांत सहज रूप से किया है। इनकी साखियों में जहाँ कहीं भी अलंकार दिखाई पड़ता है वह वाणी विलास के प्रदर्शन हेतु नहीं है। इन्होंने अध्यात्मानुभूति को सरल, सहज ग्राह्य और सुन्दर रूप से प्रकाश करने के लिए अनेक सरल उपमा, रूपक, दृष्टांत, उदाहरण आदि विभिन्न अलंकारों का प्रयोग अपनी साखियों में किया है। गुजराती साखिकारों द्वारा प्रयुक्त अलंकारों का सम्यक अध्ययन करेंगे और उनके काव्य कौशल का परिचय प्राप्त करेंगे।

सामान्यतः यह जाना जाता है कि अर्थालंकार तो अन्तर्वासी होता है और उस तक सभी साखीकार नहीं पहुँच पाते, परन्तु शब्दालंकार सर्वप्रिय और सर्वमान्य है। अतः शब्दालंकारों की विपुलता साखिकारों में विशेष दृष्टिगोचर होती है। परन्तु इसका आशय यह नहीं है कि साखीकार शब्दालंकारों के ही अधिकारी थे या उनकी पहुँच शब्दालंकारों तक ही सीमित थी। उपलब्ध साखियों के साम्यक अध्ययन के आधार पर आसानी से कहा जा सकता है कि गुजरात के साखीकार दोनों प्रकार के अनायास व्यवहार में स्वभावतः माहिर थे।

<u>अनुप्रास</u> : जहाँ वर्णों में समानता होती है वहाँ अनुप्रास होता है। इनके पाँच भेद हैं :- ‖1‖ छेकानुप्रास, ‖2‖ वृत्यनुप्रास, ‖3‖ श्रुत्यनुप्रास, ‖4‖ लाटानुप्रास, ‖5‖ अन्त्यानुप्रास।

भक्तिभाव पूर्ण साखियों में सहज भावात्मक प्रवाह के लिए अनुप्रासालंकार का विपुल व्यवहार हुआ है।

1. <u>छेकानुप्रास</u>

छेकानुप्रास में एक या अनेक वर्णों का सिर्फ दो बार प्रयोग किया जाता है । उदाहरण स्वरूप राजे की साखियाँ प्रस्तुत हैं :-

लव लगी मोहे तेरड़ी साची जूठी मान[1] 5 - 5
लखता है लम्बा घणा पढ़ता नहीं है पार[2]

"छेक" का अर्थ है चतुर । चतुर लोग इसके द्वारा अपनी चतुराई प्रस्तुत करते हैं ।

2. <u>वृत्यानुप्रास</u>

एक या अनेक वर्णों की दो से अधिक बार जहाँ आवृत्ति होती है, वहाँ वृत्यानुप्रास होता है ।

जग जीता ते जीवड़ा जीन जाना ऐ नाथ[3] 47
सत्ताधीश सर्वज्ञ है, सबको साक्ष समीप[4] 11
तदाकार तद्रूप व्हे, तन्मय तत्, स्थिति वत्[5] 19

<u>रूपक</u> : साखियों में इस अलंकार के द्वारा अभेद की प्रतीति कराई गई है । ब्रह्म और जीव, ब्रह्म और जगत, भक्त और भगवान आदि की महत्ता को स्पष्ट करने के लिए गुजरात के साखिकारों ने अनेक रूपकों का प्रयोग किया है । वस्तु तत्व की दृष्टि से देखने पर प्रतीत होता है कि कई साखियों में संवेदनशील रूपक है तो कई साखियों में बुद्धि से विभूत रूपक ।

---

(1) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 120)
(2) अर्जुन वाणी - (पृ0 489)
(3) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ0 219)
(4) रसथाल - (पृ0 238)
(5) रसथाल - (पृ0 233)

भक्ति की महत्ता और माया की विनाश शक्ति का परिचय देने के लिए दयाराम ने एक सुन्दर रूपक स्थापित किया है। मलयगिरि के चन्दन जैसी कृष्णभक्ति है और जहरीले विषधर सांप की तरह बाधा विघ्न रूपी अविद्या है। साखी द्रष्टव्य है। उपयुक्त उपमान और उनके गुणों की समानता होने के कारण यह साखी हृदयग्राही है -

मलयगिरि चंदन सम, कृष्ण भक्ति को रंग
तामें अविद्या विघ्न कर, विषधन व्हौर भुजंग 119
- रसथाल §पृ0 283§

छोटय ने भी लकड़ी और आग के द्वारा जीव का एक सुन्दर रूपक स्थापित किया है -

काष्ट अग्नि संजोगते, धुंवा प्रगट ज्युं होय
जड़ चेतन बीच कल्पना, जीव कहावत सोय 13
- छोटयवाणी §पृ0 255§

एक दूसरी साखी में छोटय ने सुगन्ध और परमाणु का रूपक स्थापित करके प्रकृति और माया के गुण का सामन्जस्य स्थापित किया है।

ज्युं सुगन्धी तेल की, और फूल की वास,
ऐसा रूप प्रमाणु का, फैलत चारो पास 6
- छोटयवाणी §पृ0 255§

वस्ता ने गुरू की महत्ता प्रतिपादित करने के लिए रवि के साथ उनकी गुणवत्ता को माना है। जिस प्रकार रवि के उदय होते ही अंधेरा मिट जाता है उसी प्रकार एक सच्चे गुरू के प्राप्त होते ही अज्ञान दूर हो जाता है -

स्वामी ताकु जाणीए, जाका रवि जैसा भास
तिमिर कहोये ना रहे, सध के करे प्रकाश 23
- वस्ता नी साखियों - गुरू को अंग

प्रीतम के अनुसार मन को जब तक सदगुरू का उपदेश नहीं मिलता तब तक चित्त स्थिर नहीं होता क्योंकि संसारी प्रपंच अर्थात् तृष्णा रूपी तोरंग पर चढ़कर इधर उधर भागता रहता है । तृष्णा का सुन्दर रूपक स्थापित किया है । तृष्णा और तोरंग दोनों चंचल होते हैं -

तृष्णा तोरंग मन चढ़या, धाया देश विदेश
कहे प्रीतम स्थिरता नहीं, बिन सदगुरू उपदेश 25
- प्रीतम वाणी (पृ0 80)

देवा साहब ने भगवद् नाम के महत्व को स्थापित करने को चन्द्र और चकोर के रूपक की योजना की है -

नाम चन्द्र चकोर जन ।। रटहिं सुरति लगाई ।।
सौजग अंग दाझे नहीं ।। परम सुधारस पाई ।। 23
- राम सागर (पृ0 135)

प्रीतम ने सांग रूपक के सहारे सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किया है । अस्थि और मांस रूपी नीड़ में प्राण रूपी पंखी कैदी बनकर छटपटा रहा है ब्रह्म मिलन की तीव्र आतुरता को कवि ने स्पष्ट किया है । काल रूपी अहेरी, उस पंखी को हनन की प्रतीक्षा में घूम रहा है ।

अस्थि मांस मालो कियो, तामें पंखी प्राण
काल अहेडी फिर भमे, प्रीतम चेत अजाण 7
- प्रीतम वाणी (पृ0 71)

भक्ति में तीव्रता की परख, विरहानुभूति है । जितना विरह तीव्र होगा भक्ति की पराकाष्ठा उतनी ही समझी जायेगी । प्रीतम प्रभु के विरह में किस प्रकार जीवन व्यतीत करते हैं यह द्रष्टव्य है उन्होंने अपने तन का दीपक जलाया है जलना तैल द्वारा सम्भव है वह विरह है । जिनमें प्राणों की बाती है जो पति मिलन के लिए दिन रात जल रही है ।

ब्रह्म और जीव के सम्बन्ध को स्पष्ट करने के लिए प्रीतम ने सुन्दर रूपक प्रस्तुत किया है । ब्रह्म रूपी सिन्धु में मन रूपी मिन मगन रहता है -

कहे प्रीतम हरि सिन्धु में, मगन रहे मन मीन 2
- प्रीतम वाणी (पृ0 84)

अखा ने जगत में लय और विलय को स्पष्ट करने के लिए कुएं में स्थित घड़ों के माला का रूपक प्रस्तुत किया है । जिस प्रकार कुएं के घड़ों की माला में पानी का स्तर समान रूप से नहीं रहता ऊपर आते ही भरा घड़ा खाली हो जाता है उसी प्रकार इस जगत सृष्टि का कार्य कभी स्थिर नहीं रहता एक के बाद दूसरे का विनाश होता रहता है -

घटमाला जेम कुपनी भरे भरे कलवाय
- अप्रकाशित साखी - सहज सिद्ध अंग

यह गुजरात के संतों की विशेषता है कि उन्होंने गूढ़ बातों को अपने परिवेश से सम्बन्धित रूपकों द्वारा स्पष्ट किया है ।

प्रीतम ने सांग रूपक की सहायता से नाम का महत्व और सच्चे भक्त की निष्ठा को स्पष्ट किया है -

नाम रत्न अमूल है, दिल दरिया के मांही
कहे प्रीतम मरजीवालहे, दूजा पावे नाही[1] 25

नाम रूपी अमूल्य रत्न जो दिल रूपी दरिया (सागर) में स्थित है उसे केवल सच्चा भक्त (मरजीवा) ही एकाग्र भक्ति के द्वारा प्राप्त कर सकता है । एक गोताखोर सागर से रत्न निकाल सकता है । एक सच्चा भक्त ही ब्रह्मोपासक बन सकता है ।

---

(1) प्रीतम वाणी - (पृ0 55)

इसी भाव से प्रेरित होकर प्रीतम ने अन्य साखी में रूपक के माध्यम से माया, ब्रह्म, आत्मा विषयक भावों को व्यक्त किया है -

अर्क आत्मा निर्मला, विषय वादली छांय
कहे प्रीतम कामे करी, सार न सूझे काय 9

आतम अर्क उद्योत है, काम ग्रहण कहेवाय[1]
कहे प्रीतम कैसे करे, भीतर लागी लाय 10

उपमा: जहाँ पर दो पदार्थों के उपमान-उपमेय भाव से समान धर्म का कथन किया जाय वहाँ उपमा अलंकार होता है । वस्तु की गुण सम्बन्धी विशेषता स्पष्ट करने के लिए दूसरी परिचित वस्तु से, जिसमें ये विशेषतायें अधिक प्रत्यक्ष है, उसकी समता कही जाती है ।[2]

गुजरात के साखिकारों ने अपनी साखियों में अनुभूतियों को स्पष्ट करने के लिए अनेक सरस और सरल उपमाओं का प्रयोग किया है । उनके द्वारा प्रयुक्त कुछ उपमायें दृष्टव्य हैं -

प्रीतम ने उपमा के द्वारा सज्जय व्यक्ति के गुण को उदभाषित करने का प्रयास किया है । उन्होंने सज्जन को चन्दन के समान कहा है, जिस प्रकार चन्दन शीतलता और सुगन्ध प्रदान करता है उसी प्रकार सज्जन व्यक्ति भी अपने सदगुणों के द्वारा मन को शीतल करता है और दूसरों को अपने गुणों से प्रभावित करता है -

सज्जन चंदन सारीखा शीतल वास सुवास 5

जिस प्रकार कठिन हीरा हथौड़े की चोट सहन करता है उसी प्रकार सज्जन व्यक्ति को भी इस संसारी प्रपंचों का कष्ट सहन करना पड़ता है -

----

§1§ प्रीतम वाणी - §पृ0 94§

§2§ काव्य शास्त्र - डॉ0 भगीरथ मिश्र - §पृ0 167§

सज्जन हीरा सारीखा, सहे धवन की चोट 6
- प्रीतम वाणी ‡पृ0 99‡

सज्जन शक्कर सारीखा, कड़वा कबहु न होय 20
- प्रीतम वाणी ‡पृ0 100‡

कहकर कविनेसज्जन व्यक्ति के मार्मिक गुणों को स्पष्ट किया है । अन्तत: प्रीतम ने सज्जन को सूरज और समुद्र के समान गुणधारी कहकर उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त की है जिस प्रकार सूरज अंधकार का नाश करता है और समुद्र अपने अन्दर अनेक गंदी नदियों को बिना कोई हिच-किचाहट समा लेती है उसी प्रकार सज्जन व्यक्ति भी लोगों के दुर्बुद्धि का नाश करके उनको अपने साथ रख कर अपने रंग में रंग लेता है ।

"सज्जन सूरज सरीखा" और "सज्जन समुद्र सरीखा"

कवि ने इसी भाव को स्पष्ट किया है । विशालता और महानता जैसे गुणों का अधिकारी होने वाला व्यक्ति ।

जिस प्रकार वृक्ष की छाया क्षणिक होती है उसी प्रकार यौवन के दिन भी क्षणिक होते हैं । देवा साहब ने एक सुन्दर उपमा प्रस्तुत की है -

जोबन के दिन जात है । ज्यों तरबर की छांय ।। 3
- रामसागर ‡पृ0 139‡

क्षण भंगुरता के लिए तरुवर की छांव से सुन्दर और यथार्थ अर्थ नियोजन शायद अन्य उपमान द्वारा सम्भव नहीं, अत: कवि की काव्य कला कौशल का परिचय प्राप्त होता है ।

जीवणदास ‡राम-कबीर‡ जी ने भी क्षण भंगुरता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है उपमा नियोजन के द्वारा । राधा है परन्तु कृष्ण ने राधा के मान को ओस की तरह क्षण भंगुर कहा है । जिस प्रकार ओस क्षण स्थायी है राधा का मान भी क्षण स्थायी है -

मान कियो भली करी । जान तिहारो सान ।।
जैसो कनका ओस को । ऐसो तिहारो मान ।। 2
- उदाधर्म ।पृ0 428।

अरजुन ने संतों को वसंत ऋतु के समकक्ष माना है । दोनों के आने से ही उल्लास छा जाता है । ऋतुओं का राजा वसंत का और मानव योनी में संत पुरूष को श्रेष्ठ माना जाता है । गुणवत्ता की दृष्टि से दोनों समान है ।

अरजुन संत वसन्त है, गाये राग अनुराग । 20
- अरजुन वाणी

गुजरात के साखिकारों की यह विशेषता है कि उन्होंने उपमाओं का चयन प्रकृति के परिवेश से किया है । प्रकृति को ही प्रथम स्थान दिया है । ये उपमान इतने सरल और हृदयग्राही बन गये हैं कि जैसे इसके व्यतीत दूसरी कोई उपमा उपयुक्त नहीं लगती ।

संतराम महाराज ने मन के खिलने की अवस्था को फूल के खिलने जैसा कहा है । यहाँ खिलना प्रसन्न होने के अर्थ में है । अतः कवि ने सरोवर में फूल खिलने की अवस्था को प्रस्तुत करके एक सुन्दर उपमा नियोजित किया है ।

मन मेरा खिल रहा है जैसा सरोवर फूल 24
- गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी ।पृ0 157।

रविदास ने मीन की उपमा नियोजित करते हुए भक्त की एकाग्र मन से ईश्वर के स्मरण-मनन करने की निष्ठा को प्रस्तुत किया है । जिस प्रकार मीन जल से निकलते ही प्राण त्याग देती है उसी प्रकार एक निष्ठावान भक्त को राम नाम के सिवाय और कुछ भी ध्यान में नहीं आता । एक निष्ठावान भक्त की उपमा के लिए मीन का उदाहरण दिया है -

राम नाम ऐसो जपो, जैसे जल में मीन,
रवीदास विधरे तेमरे, ऐसे मन कललीन 12
- रवीसाहब की साखियाँ - ।पृ0 175।

गुजरात के संतों ने "निष्फल कार्य" को स्पष्ट करने के लिए प्राय: "बांझ" शब्द का प्रयोग किया है । मध्यकाल के अन्ध-विश्वासी लोग बांझ स्त्री को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते थे । अत: प्राय: दुष्कर्म, असफलता, फलहिन वृक्ष आदि के लिए बांझ शब्द का प्रयोग विपुल परिमाण में मिलता है । वस्ता ने बांझ शब्द का संत संगत न करने वालों के लिए प्रयोग किया है । इस प्रकार एक चित्रवत उपमा प्रस्तुत की है जिस प्रकार बांझ का कोई सम्मान, महत्व नहीं होता उसी प्रकार संत संगत न करने वालों को समाज में कोई स्थान नहीं होता है । सामाजिक उपमा है जिसे कवि ने सामान्य जन को संत संगत की महत्ता समझाने के लिए साखी में प्रयोग किया है -

बिना संत की संगत करो, सो बांझीआ कहेवाय
- वस्ता नी साखियों - अंग संत महात्म्य

दूसरी साखी में कवि ने बांझ शब्द का प्रयोग एक नये रूप में किया है । सांसारिक नाम व रूप बांझ के समान है । इनसे ब्रह्मानुभव का प्रसव नहीं होता ।

नाम रूप ए बांझीया अनुभव प्रसाव न थाय
- वस्ता नी साखियों - अंग अधीनता को - 9

व्यतिरेक : प्रीतम ने व्यतिरेक अलंकार के द्वारा सज्जन के गुणों को दर्शाया है । सज्जन की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिए उसे उपमान से भी श्रेष्ठ कहा है । उदाहरण प्रस्तुत हैं । कल्पद्रुम फलदायक है उससे फल की प्राप्ति होती है । कवि ने सज्जन व्यक्ति को कल्पद्रुम से भी श्रेष्ठ कहा है क्योंकि वह न केवल मानव का भला करता है बल्कि उनके कष्टों को भी हरता है ।

कल्पद्रुम ते अधिक है, सज्जन को गुण सार
कहे प्रीतम तरु देत फल, सज्जन हरे विकार 2
- प्रीतम वाणी (पृ0 99)

सुधा से भी मिठा कहकर प्रीतम ने सज्जन व्यक्ति की अतिव प्रशंसा की है । अपनी मिठी वाणी के द्वारा अवगुणों का नाश करता है तथा ज्ञान और विवेक का दान भी करता है ।

सज्जन सुधा से मिष्ट है, अवगुण हरे अनेक
कहे प्रीतम पावन करे, देवे ज्ञान विवेक ।।
- प्रीतम वाणी (पृ० 100)

कविका प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम का परिचय मिलता है । कल्पद्रुम, सुधा, उजला, शक्कर आदि उपमाओं द्वारा इस तथ्य की पुष्टि होती है ।

दयाराम के "साखी-दूहा" ग्रंथ में अनेक स्थानों पर विभिन्न अलंकारों का सुन्दर सहज विन्यास हुआ देखा जा सकता है । प्रस्तुत साखी में सत्पुरूष को पारसमणि से भी अधिक बताने में व्यतिरेक अलंकार का सुन्दर प्रयोग किया है ।

पारसमणी जड़ लोहिको करत कनक को रूप
ताते अधिक सत पुरूष है, जो करीहतद रूप 46
- रसथाल (पृ० 235)

पारसमणि जड़ लोहे को कनक बनाकर छोड़ देता है जबकि सत्पुरूष जड़ जीव को स्वयं रूप अर्थात् सत्पुरूष बना देता है ।

- सुंदर्भगर्भित शैली

अखा, दयाराम प्रीतम आदि कवियों ने विविध शास्त्रों का गहन अध्ययन करने के कारण अपनी उक्ति के प्रमाण या उदाहरण स्वरूप विविध ग्रन्थों का उल्लेख करके अनेकों साखियाँ लिखी है । कुछ एक उदाहरण "रसथाल" नामक साखी-दुहा ग्रन्थ से उद्धृत हैं । दयाराम ने ब्रह्म सम्बन्धी अपनी अनुभूति की समरूपता दिखाने के लिए उपनिषदों का सहारा लिया है -

4

यजुर्वेद तैत्तिर्य में आनन्द ब्रह्म है जेह[1]
सो ही अक्षर ब्रह्म को, गनितानंद पद तेह 18

एक अन्य साखी में भी कवि ने भव के फंद काटने के उपायों को बताकर छांदोक्य उपनिषद के एतद् सम्बन्धी निरूपण के प्रति संकेत दिए हैं -

जस धातु मिश्रित करे, तस जीव प्रभु संबंध[2]
छंदोग्य उपनिषद कथे, छूटत भव को बंध 73

कवि ने रामचरित मानस के "काक भुषंडी संवाद" का संदर्भ अपनी साखियों में यों दिया है -

रामायन तुलसीकृत, काक भुषंडी प्रसंग[3]
वामें भगवद भक्त की, कोटी सुनिहैं उमंग 218

श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध की कथा का संकेत दयाराम की निम्नलिखित साखियों में मिलता है -

ब्रह्मा ने वत्स हरन किये, बछरा बालक संग,
तब बछरो बालक कीके, वेनु नेत्रादि शृंग 202

सबही रूप श्रीकृष्ण ज्यु, भये तद्‌वत आप[4]
एकोऽहं बहु श्याम, श्रुति, दाखी प्रगट प्रताप 203

प्रीतम ने एक साखी में गीता के सातवें अध्याय का संकेत किया है -

गीता के अध्ये सात में, ज्ञान शिरोमनि कीन[5]
प्रीतम पारथकु कहा, कृष्णचन्द्र प्रवीण । 3

---

(1) रसथाल - (पृ0 233)
(2) रसथाल - (पृ0 238)
(3) रसथाल - (पृ0 254)
(4) रसथाल - (पृ0 253)
(5) प्रीतमवाणी- (पृ0 63)

अपनी अनुभूति के समर्थन में कवि प्रीतम ने पौराणिक पात्रों का तथा उनकी भक्ति का संकेत भी किया है । यथा -

भक्ति करी प्रह्लादजी, हरि धर्यो / नर सिंह रूप,
भक्ति विभीषणे करी, साचा हृदया साथ
भक्ति पाण्डुसुते करी, भज्या द्वारकाधीश ।

इस प्रकार अपनी अनुभूतियों की समरूपता एवं पुष्टि में अखा, दयाराम, प्रीतम आदि कई कवियों ने वेद, उपनिषद, गीता एवं विविध पुराणों की अंतर्कथाओं, पात्रों आदि का संदर्भ देकर संकेतात्मक शैली का व्यवहार किया है । इस प्रकार के संकेतों से कवि की बहुश्रुतता का भी बोध होता है ।

• प्रश्नात्मक शैली

ब्रह्म विषयक अनेक प्रश्नों को संतों ने अपनी साखियों के माध्यम से व्यक्त किया है । कहीं-कहीं उन प्रश्नों का उत्तर देकर के समाधान भी प्रस्तुत किया है । कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं -

नैणे नीर भराए छे, केम रहेवाय नाथ ?[1]
राजे, नड़ता गोपीका कहे "अमने तेडु साथ" 3

राजे ने ब्रेहेगीता नामक रचना में साखियों को माध्यम से अनेक विषयों को प्रश्नात्मक शैली में प्रस्तुत किया है ।

मूख मांडी सू-सू कहीए ? राजे रंग अपार[2]
उधव केहे, एकी जीभा मांडी केम कहेवाए ?
राजे रक्षणी गोपीका पूरण प्रेम धाए । 39

अखा ने भी प्रश्नात्मक शैली में साखियाँ लिखी हैं -

मैं हुं तो तुज है तु है तो भी तुज । अखा नाम आगे करी तू आप डरावे क्युंज[3]
महातम न लहे मनकु रवी और मान बड़ाईच्छाय[4]
ज्युं पहेला डोहले नीर कुं, तो पीछे पीया क्युं जाय । 12

1। अक्षयरस - ।पृ0 215।
2। वही - ।पृ0 360।

प्रीतम ने प्रश्नात्मक शैली में संसार विषयक विविध प्रश्नों का समाधान किया है ।

संसार कोणे पेदा कर्यों, कोणे उपजाव्यो हूं ?
कहे प्रीतम सौ कारमुं, दीसे छे तो शुं ?

कुंडलिवत् (सर्पगतिवत्) शैली

जिस प्रकार सर्प की गति टेढ़ी मेढ़ी होती है उसी प्रकार कई साखियों में कथागत भाव एवं विचार भी टेढ़े मेढ़े ढंग से गुंथे होते हैं । लयात्मक रूप से ऐसी साखियाँ सरस और मधुर होती है । चौथे चरण के भाव और शब्दों की पुनरावृत्ति द्वितीय साखी के प्रथम चरण में होती है । इसी की पुनरावृत्ति तृतीय साखी के प्रथम चरण में भी होती है । इसी प्रकार कवि जब तक चाहे भावों और शब्दों की श्रृंखला को बनाये रखता है । राजे द्वारा रचित एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत है -

राजे रंक गरीब का आन पड़ा दरबार,
नाम लेत तेरा फीरे, जानत है संसार ।। 53

जाने सब संसार ए, राजे हरि के दास,
जग का जंजला छोड़ के ऐक हरि की आस ।। 54

आस एक अलख की राजे के आ भव
जाने सब संसार ए, लागी तेरी लव ।। 55

लव लागी मोहे तेरड़ी साची जूठी मान[1]
राजे कू रज दीजिए भाव भगत भगवान । 56

---

(1) राजे कृत काव्य संग्रह - (पृ० 220)

इस प्रकार के भावों और शब्दों की श्रृंखला के कारण इस शैली को सर्प गति वद् नाम दिया जा सकता है । रवि साहब की एक साखी भी दृष्टव्य है -

गुरू उपदेश ना पाइए, ज्यां त्यां सधले ठोर
सदगुरू का रविदास करे, मत अगोचर और ।। 165

ठरत ठेरावे ठोर गुरू, वहेन वारू वाट
रविदास सदगुरू के शब्द से, चड़े त्रीकुटी के घाट । 166

चड़े त्रीकुटी का घाट पर, अमृत पीये अधाय
रवीदास सदगुरू शब्द से, अनहद नाद बजाय ।। 167

अनध्य नाद बजीया, गरजी रहया गगन[1]
रवीदास जोती झलमले, सेवक भया मगन ।। 168

यह साखी सर्पगतिवद् शैली का उत्कृष्ठ उदाहरण है । इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं । यह गुजरात के साखिकारों की विशेषता हैं कि उन्होंने "अनहद नाद" जैसे विषय का कितनी सरलता से साधारणीकरण किया है ।

• **समस्त पद शैली**

साखिकारों ने समस्त पद शैली के माध्यम से अपनी कला कुशलता को उद्भाषित किया है । वैचारिक बुद्धि युक्त एवं दार्शनिक विचारों, भावों को समस्त पद शैली के माध्यम से ही व्यक्त किया जा सकता है । दयाराम इस प्रयोग में माहिर हैं -

निन्दा स्तुति को सम लहै, करहि कृष्ण गुनगान
निर्भय स्वतंत्र निर्पेक्षता, ग्राम्य कथा नहिं कान 86

----

[1] रविदास नी साखियों - [पृ0 227]

ज्ञान-विवेक तारतम्य सो, नीति धर्म समेत
रस भंग कदा नहिं ज्याहि में, ऐसो वचन संकेत 89

सत्योच्चार धर्माचरन, नित करी ब्रह्माभ्यास[1]
आलस्य प्रमाददुर्गुन तजे, गुरूकुल कर हि निवास 92

प्रीतम ने भी तत्व निरूपण करने के लिए पारिभाषिक शास्त्रीय सामासिक शैली का प्रयोग किया है । एक उत्कृष्ठ उदाहरण प्रस्तुत है -

निर्गुण निराकार नित्य, निजानंद निज रूप,
कहे प्रीतम व्यापी रहयो, चैतन्य शुद्ध स्वरूप[2]

क्षितिजल पावक पवन नभ हुं, नहीं त्रिगुण अहंकार 1
इंदि चतुर्दश देवता, शब्दादिक साक्षात 2

पंच तत्व की इन्द्रि दश, पंच कर्म पंचज्ञान[3]
कहे प्रीतम ऐ पृच्छिता, टेले देहाभिमान 3

<u>असमस्त पद शैली</u>

यह शैली सरल और सीधी होती है । कवि अपनी अनुभूति को बिना किसी क्लिष्ट शब्दों और सामासिक शब्दावली के सीधे-सादे ढंग से व्यक्त करता है । साधारण शब्दावली होने के कारण शास्त्रीय नियमों का भी प्रयोग कम होता है । इस रूप में राजे, छोटय, नाथाकाका, अनीशा आदि भक्तों ने साखियाँ लिखी हैं । कुछ कवियों के उदाहरण प्रस्तुत हैं -

---

(1) रसथाल - (पृ0 240)
(2) प्रीतमवाणी - (पृ0 90)
(3) प्रीतमवाणी - (पृ0 88)

राजे हरि मिलन के लिए अपनी आतुरता दर्शाते हुए कहते हैं -

एम अमने आतूरता हरि मलवाने काज,
राजे रड़ता सहू करे, पण आवे नहीं महाराज

भावार्थ भी सरल है और कवि ने सरल शब्दों के द्वारा अपने विचारों को मधुरता से व्यक्त किया है ।

"निरबान" कहत अथ बावरे, चली उमरीया बीत[1]
वो तेरे दिलदार है, कबहु लगावे प्रीत 2

निर्वाण साहब ने बड़ी सरलता से अपने भक्ति भाव को स्पष्ट किया हैं ।

• अनुवादात्मक शैली

शास्त्रों एवं पुराणों के मध्य निहित गूढ़ तत्वों का निरूपण करने वाले श्लोकों, वचनों और सूत्रों का अनुवाद करके उसे अपनी साखियों में प्रयोग करने की कला भी गुजरात के साखिकारों में प्राय: पायी जाती है । शास्त्रविद् होने के कारण यह विधा दयाराम के लिए सहज और अनायास होती है । विषय निर्णय होने पर स्वत: ही शास्त्र ग्रन्थों के मूलभूत तत्वों का उदाहरण उनकी लेखनी में आ जाता था ।

दयाराम द्वारा रचित "साखी दूहा" ग्रन्थ में इस प्रकार के अनेक उदाहरण प्रस्तुत है । एक साखी उदाहरण स्वरूप श्लोक के साथ प्रस्तुत है -

"सत्संगात भवति साधुता खलानां
साधुना नहि खलु संगभात खलत्व
अमोद कुसुमभवं मृदेबधते, मृदगंधं नहि कुसुमाव धारयते ।।

दु:सगी को पास कबु, नहिं व्यापक कछु लेश
आपत्काल प्रसंग तहु, नहिं छाड़त निज वेश ।। 166

---

[1] निर्वाण साहब - [पृ0 86]

एक और उदाहरण श्रीमद्भागवत से उद्धृत है और उसी के संदर्भ में कवि ने साखियों में "ब्रजौकसाम्" को ब्रजराय कहा है -

महत् महत् बड़ भाग्य है, जीन वह प्रभु खिलाय
रीस क्रोध द्रेग मातकी, सहत सदा ब्रजराय । 148

"अहोभाग्य-अहोभाग्य" नंद गोप ब्रजौकसाम ।।
यन्मित्रं परमानंदं पूर्णब्रह्म सनातनम् ।।
(श्रीमद भागवत्)

इस प्रकार का शैली वैविध्य गुजरात के साखिकारों में मिलता हैं । इससे उनकी भाव संप्रेषणात्मकता में सरसता आ गई है और कठिन और गम्भीर विषय सहज और सरल हो गया है । यह देखने में आता है कि अगर साधारण रूप से साखियों का अध्ययन किया जाय तो शायद उपरोक्त शैलीवैशिष्टों को ढूंढना आसान न होता । क्योंकि यह माना जाता रहा है कि दुहा साखी जैसे लघु काव्य रूपों में शैली वैविध्य हो ही नहीं सकता । यह गुजरात के संत कवियों की विशेषता है कि न केवल भाव बल्कि लेखन कला और भावाभिव्यक्ति भी उनकी परिमार्जित और सशक्त है । अत: यह सर्वसम्मत है कि उपरोक्त प्रयोग में कवियों ने सफलता प्राप्त की है । निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि शैली वैविध्य से दर्शन और अध्यात्म के गुढ़ गम्भीर तथ्यों का साधारणीकरण करने में ये संत कवि पारंगत दिखाई पड़ते हैं । इन साखिकारों की शैली में प्रभावात्मकता का गुण सर्वत्र विद्यमान है । श्रोता उनके अभिव्यक्ति के सहारे-सहारे आबद्ध होता जाता है । इनकी भाषा शैली आम आदमी की है जिसमें आम जनता की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया गया है । साखिकारों का यह भाव तथा कला सौष्ठव निश्चय ही प्रशंसनीय है ।

तुकांत

साखिकारों ने भजनानंदी जनता को प्रभावित करने के लिए संगीतात्मकता के साथ-साथ वैविध्यपूर्ण तुकांत का भी निर्वाह अपनी साखियों में किया है । तुकांत या अंत्यानुप्रास यह साखी दोहा का एक रूदप एवं अभिन्न अंग है । किसी भी साखी या दोहा की रचना बिना तुकांत हो ही नहीं सकती हैं । कभी-कभी तुकांत का निर्वाह खिंचातानी करके भी किया गया होता है किन्तु हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि गुजरात ने इन रचनाकारों का तुकविधान अनायास तत्व अर्थात् सहज एवं स्वाभाविक है ।

तुक विधान के विविध प्रकार

दयाराम, प्रीतम, जीवणदास, लालदास आदि साखिकारों ने अपने काव्य कौशल का परिचय देते हुए विविध तुकात्मक साखियों की रचना की है । गुरू-लघु दोनों मात्राओं को ध्यान में रखकर अध्यात्म विषयक तत्वों को स्पष्ट करना कठिन ही नहीं एक सच्चे साधक की साधना भी है ।

गुरू-लघु - गाल

ऐसे बड़े उदार निधि, करूणावंत रसाल गाल
सुसंश सेवन वाहिको, करत ही त्रुटे जाल। 60

रज्जु प्रेम के सुत्र ते, स्वतंत्र हरि वश कीन गाल[1]
और सुत्र सब तोरी प्रभी, होत ही स्नेहाधीन 61।

गुरू-गुरू - गा गा

मंत्रार्थ रहस्य चिंतन सदा, ब्रह्मवित् परमार्थ जागा[2]
सदा सरवर वृक्ष सम, नहिं रंचक कछु स्वार्थ गागा 59

---

[1] प्रीतम वाणी - [पृ0 237]
[2] रसथाल - [पृ0 237]

विद्वत् रत्न कास्मीरी प्रति, नितही राखी द्रष्ट[1]
पोथी अशुद्ध न होही कबु, अस बानी सुस्पष्ट 82

लघु-गुरू - लगा

रविदास शीस्य न कीजिए, रीसे रोस बधु लगा[2]
नमण खमण ने दीनता, सतगुरू से ही सधे लगा ।। 116

लघु-लघु - ल ल

माला पराया जान के नेहेचा करे जो जन[3]
नेहचा वीन फलता नहीं तात खाली मन ।।
- चातक को अंग

प्रेम पदारथ प्रेमसो, रवीदास ब्रह्म रस[4]
अकल कला अजीतसो, साहेब होवे वश 18

संगीत

साखी गेय काव्य है । गायन के द्वारा ही इसका प्रभाव जनता पर अधिक पड़ता है । गुजरात के साखिकारों ने संगीत की प्रभावशालिता को पहचान कर ही इसका आश्रय ग्रहण किया और मुक्त रूप से विभिन्न राग रागनियों में साखियाँ लिखी । प्रीतम एक मस्त भजनिक थे । इतना ही नहीं वे राग-रागिनियों के पंडित भी थे । ब्रह्म विषयक गूढ़ तत्व निरूपित साखियों को रागानुरूप बनाकर गायन योग्य बनाना एक कला है जो यथेष्ट संगीतज्ञान सापेक्ष है । परन्तु संत मनमौजी और जनहित के लिए रचना करते थे इसलिए साखियों में

----

(1) रसथाल - (पृ0 239)
(2) अक्षय रस - (पृ0 323)
(3) रविदास नी साखियों - (पृ0 223)
(4) रविदास नी साखियों - (पृ0 233)

सोरठ थाट के अन्तर्गत आने वाले सभी रागों में साखियाँ गाई जाती हैं ।

राग देव गँधार सारंग का एक प्रकार है । इस राग को दोनों निशाद लेकर गाया जाता है । नट, मदमाद सारंग आदि सारंग के प्रकारों में गाया जाता है । जीवणदास द्वारा रचित राग देवगंधार राग में गायी जाने वाली साखियाँ प्रस्तुत है -

बाल द्वारे वामन रहयो । तो गौ चरावे कौण ।
सब जग भूल्यो जीवणा । ब्रह्मादिक ही कौण ।।

वामन रूप धर्यों जीवणा । बालि चाँप्यो पाताल ।
सुरपति संकट निवारया । सो निज जन प्रतिपाल ।।

राग कल्याण को थाट कल्याण कहा जाता है । इस राग के सभी स्वर शुद्ध होते हैं । केवल मध्य स्वर तीव्र लिया जाता है । तीव्र थोड़ा उच्च स्वर में गाया जाता है । गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है । रात के आठ बजे से इस राग का गायन आरम्भ किया जा सकता है । रात्रि का आरम्भ और प्रहर की सूचना के लिए इस राग का साधारणतः प्रयोग होता है ।

जीवणदास ने साखियों में ही इस राग को गाने का समय सूचित किया है -

गोडी वेला वही गई । अस्त भयो रवी भाण ।
ता पीछे घड़ी दो गई। जब प्रगटयो राग कल्याण ।।

कल्याण कल्याण सबको कहे । अकल्याण कहे न कोय ।
जा घर भक्ति गोपाल की । ता घर सदा कल्याण ।।

3

काव्य के नियमों का यथावत पालन नहीं किया। संगीत इनकी वाणी का जन्मजात वरदान था। ईश्वरीय वरदान के कारण इनकी स्वानुभूतिपूर्ण साखियाँ विभिन्न राग रागिनियों में फूट पड़ती थी। गबरीबाई, बाबालोचन स्वामी, निर्वाण साहब, दयाराम आदि मस्त साखिकारों को किसी संगीत विधा की अनिवार्यता नहीं थी। भाव विभोर होकर जब भजनों के मध्य साखियों का गायन करते तब जनता अनायास ही मन्त्र मुग्ध होकर उसका आनन्द उठाती थी।

गुजरात के साखिकारों की यह एक विशेषता है कि उन्होंने जिस राग में साखियाँ लिखी है उस राग का उल्लेख भी उसी साखी में कहीं कहीं देखने को मिलता है।

जीवणदास ॥राम-कबीर॥ एक महान कृष्ण भक्त थे। कृष्ण का गुणगान करना ही उनके जीवन का प्रधान ध्येय था। राग सोरठ में उन्होंने अनेक साखियाँ गाई हैं।

राग सोरठ, थाट का एक प्रकार है। इस राग की उत्पत्ति सोरठ देश से हुई थी। युद्ध के समय गाये जाने की प्रक्रिया को सोरठ कहा जाता था। इस राग में राजा का उसके वैभव का, राज्य का, देश का वर्णन किया जाता है। जीवणदासजी ने इस राग में कृष्ण की प्रशस्ति का गायन किया है। राग सोरठ की कुछ साखियाँ प्रस्तुत हैं -

सोरठ देश सोहामणो। मुजने जोयाना कोड।
रतनागर सागर धुधवे। त्यां राज करे रणछोड़॥

सोरठ वासी द्वारका। जादव छपन क्रोड़।[1]
मथुरामां हरि जनमीया। वहाले वास्यो सोरठ देश॥

॥1॥ उदाधर्म पंच रत्न माला - ॥पृ0 628॥

राग सारंग में अधिकांशत: कृष्णभक्ति के गीत गाये जाते हैं । राग सोरठ पर से यह राग बना है । इस राग के आरोह तथा अवरोह में गान्धार और धैवत स्वर वर्ज्य स्वर हैं । इस राग का गायन समय मध्यान्ह सर्व सम्मत है ।

कृष्ण भक्तिपरक साखियाँ अधिकांशत: इसी राग में गायी जाती है । जीवणदास, वैष्णव कवि दयाराम, प्रीतम आदि का यह प्रिय राग है । जीवणदास की प्रिय साखी प्रस्तुत है जिसमें उन्होंने श्रेष्ठ राग, श्रेष्ठ ग्रन्थ और श्रेष्ठ भक्तों का निर्देश दिया है ।

सारंग राग शिरोमणि, वेद शिरोमणि साम ।
भक्ति शिरोमणि राधिका, जे प्रगटयो गोकुल गाम ।।

सारंग राग शिरोमणि, ग्रंथ शिरोमणि धोल ।
भक्त शिरोमणि जीवण, प्रगटे ब्रीज के ग्वाल ।।

राग प्रभात स्वयं ही अपनी विशेषता स्पष्ट करता है कि यह राग प्रभात बेला में गाया जाता हैं । अत: साखिकारों ने प्रात:काल में ईश्वर का नाम स्मरण और भजन आदि के लिए इसी राग में साखियाँ गायी है । जीवणदास ने भी इसी राग में साखियाँ गायी है । कुछ साखियाँ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं -

राम नाम सबको जपे, सोतो नाम अमीर[1]
अजर अमर नाम एक है, ताकु जपे कबीर ।।

आज भी भजन मंडलियों में विभिन्न रागों में साखियाँ गाई जाती हैं ।

---

[1] प्रा०का० माला - भाग-10

वर्ण विशेष का सुन्दर विनियोग

गुजरात के साखिकारों ने बड़ी कलात्मक शैली से अपनी साखियों में वर्णों का प्रयोग किया है । एक-एक वर्ण को इतने सुन्दर रूप से प्रयोग किया है कि इनके प्रयोग से साखियों में एक रागात्मक ध्वनि उपजती है और साखी मधुर बन जाती है। दयाराम, प्रीतम, नाथा काका जैसे कवि इस प्रकार की सरस मधुर साखी लिखने में सिद्ध हस्त थे । इनकी साखियों में वर्ण इस प्रकार गुथे होते थे कि कानों में एक रागात्मक ध्वनि साखी समाप्त होने के बाद भी गूंजती रहती है और गूढ़-साखी आसानी से स्मरण में रहती है । दयाराम की एक "र" काट साखी प्रस्तुत है -

कर्तुं अकर्तुं अन्यथा, कर्तुं सदा समर्थ[1]
स्वतंत्र स्वेच्छित निर्भय, पयोधि प्रेम फल अर्थ 197

प्रीतम द्वारा प्रयुक्त दो वर्णों के लघु लघु शब्दों के प्रयोग से निम्नस्थ साखी सरस बन गई है -

जब लगी ब्रेह न उपजे, तब लगी हैं हरि दूर[2]
कहे प्रीतम कैसे मिले, निज पति परम चतुर

विरही कु व्यापे नहीं, काम क्रोध मद लोभ
कहे प्रीतम काले करी, पावे नहीं मन क्षोभ 18

जीवणदास (राम-कबीर) की एक "ल" काटप्रधान साखी सरस और मधुर है जिसमें कवि ने राधा की हरि भक्ति प्रतिपादित की है -

वृन्दावन मां जीवणा । जींति देखुं तीत लाल[3]
सो लाली हरि नामकी। राधा लाल गुलाल ।। 56

---

(1) रसथाल - (पृ0 252)

(2) प्रीतमवाणी- (पृ0 76)

(3) उदाधर्म - (पृ0 185)

इन्हीं की एक अन्य साखी है जिसमें कवि ने "स" काट प्रयोग करके एक सुन्दर लय स्थापित की है -

सारंगे सारंग गहयो । सारंग पहोंचे आय ।।[1]
मुखको सारंग जो कहुं। तो भक्षको सारंग जाय ।।

यह साखी वृत्यानुप्रास एवं यमक अलंकार की सुंदर उदाहरण है । यहाँ सारंग के विविध पशु पक्षी घटक अर्थों की समर्थ व्यंजना की गई है ।

राजे के "ट" वर्ण के प्रयोग से एक साक्षी सुन्दर लयात्मक हो गई है ।

चलना है झटपट करूं, लटपट की नहीं काम[2]
खटपट दूजी छोड़ दे, राजे रटिये राम 76

राजे रचित एक "त" वर्ण की साखी प्रस्तुत है -

जे इत है ते उत नहीं उत है ते इत आज[3] ।40

प्रस्तुत साखी में स्वसुधान दो वर्णवाले शब्दों का विनियोग भी दृष्टव्य है ।

राजे ने "स" वर्ण के कलात्मक प्रयोग द्वारा ब्रेहे गीता नामक रचना को समाप्ति काल और उद्देश्य को स्पष्ट किया है -

संवत सतर सड़सेठे बदो ब्रेहे वचन[4]
राजे ने रंग उपजु ए हरिगुण गावा मन 44

|1| उदाधर्म - |पृ0 553|
|2| राजे कृत काव्य संग्रह - |पृ0 222|
|3| राजे कृत काव्य संग्रह - |पृ0 228|
|4| राजे कृत काव्य संग्रह - |पृ0 24|

रवि साहब की एक साखी में "र" वर्ण की प्रधानता है -

रवीदास सतगुरू राम है, और राम कोउ नाथ[1]
रोम रोम में रम रह्या, बहार भीतर मांय 108

रवि साहब ने "रंग" शब्द का प्रयोग इतने कलात्मक रूप से किया है कि इससे कवि की रचना शैली की दक्षता का आभाव होता है ।

पतंग का रंग पालटे, ढूंढ्या कहु न पाय
सतगुरू का रंग रवि कहे, सो रंग जुगे न जाय 188

गुरू बीन बोह बेहे जाते है, गुरू रंग रहत रहु,
रविदास ह्रदे विचारिया, गुरू ते रंग सहु[2] 189

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि गुजरात के साखीकारों ने अपनी साखियों में तुकान्त, विभिन्न राग-रागिनियों का प्रयोग बड़ी कलात्मक रूप में किया है और इन प्रयोग में वे सर्वथा सफल रहे। वर्णों के सुन्दर प्रयोग द्वारा साखियाँ सरल और मधुर बन गई हैं। अतः यह सर्व सम्मत है कि गुजरात के साखीकारों का भाव पक्ष और कला पक्ष दोनों सशक्त हैं।

---

(1) रवि साहब नी साखियों - (पृ0 222)
(3) रवि साहब नी साखियों - (पृ0 228)